International Journal of Creative Research Thoughts
Volume 1, Issue.9, Sept 2013
ISSN:-2320-2882

ORIGINAL ARTICLE

स्वामी विवेकानन्द के चिंतन में राष्ट्रवाद

' डॉ0 जितेन्द्र शर्मा
एसोसियेट प्रोफेसर–दर्शनशास्त्र
म.गॉ.चि.ग्रा.वि.वि.,चित्रकूट,सतना,म.प्र.

सार :–

स्वामी विवेकानन्द का आविर्भाव जिस समय हुआ था देश में राजनैतिक एकता का अभाव था। छोटे छोटे नरेश और नवाब जिन भू–भागों पर आधिपत्य जमाये हुये थे उन्हीं के संवर्धन और संरक्षण में अपनी राष्ट्रीयता की इतिश्री समझ ली थी। इस खंड दृष्टि और संकुचित राष्ट्रीयता के परिणाम स्वरूप जहॉ एक तरफ उनमें अखिल भारतीयता के विचारों का उद्‌भव और संपोषण नहीं हो पाया वहीं विदेशी आक्रांताओं हेतु भारतवर्ष थोड़ी बहुत बाधा को छोड़कर एक खुला चारागाह सिद्ध हुआ। जिस प्रकार बारहवीं शताब्दी में भारतवर्ष के हिन्दू और बौद्ध प्रचंड इस्लामी शक्ति के समक्ष नतमस्तक हो चुके थे, तथैव अठारहवीं शताव्दी में हिन्दू और मुसलमान दोनों जातियॉ बिना किसी प्रतिवाद के ब्रितानी आक्रान्ताओं के चरणों में झुक गयी थीं। ब्रितानी परवशता को वे नियति का फल मान चुके थे। इधर अंग्रेजों का साम्राज्यवादी शिंकजा उत्तरोत्तर कसता जा रहा था। वे भारतीयों को असभ्य और जंगली के रूप में देखते थे। विदेशी मंचों पर वे भारत और भारतीय संस्कृति का दुष्प्रचार करते थे। इस सुनियोजित षड़यन्त्र के पीछे उनका यह प्रयास था कि विश्वमंच पर वे यह प्रतिष्ठित कर सकें कि भारत में ब्रितानी शासन का उद्‌देश्य स्वयं अंग्रेजों का हित संबंधन नहीं बल्कि असभ्य और अपेक्षाकृत पिछड़े भारतीयों को सभ्य और अधिक आधुनिक बनाना है। मेरीलुई द्वारा प्रस्तुत निम्न उद्धरण से भारतीयों के प्रति अंग्रेजी विषाक्त मानसिकता का किंचित परिचय प्राप्त होता है। 'अमेरिकनों के लिये भारत नंगों और बाघों का जादूगरों और सपेरों का देश था, जहॉ मॉ अपने जीवित शिशु को मगर के मुंह में फेंक देती थी। विधवाओं को जिन्दा जला दिया जाता था और लोग जगन्नाथ के रथ के नीचे आकर आत्महत्या कर लेते थे।

Please cite this Article as : ' डॉ0 जितेन्द्र शर्मा,स्वामी विवेकानन्द के चिंतन में राष्ट्रवाद: International Journal Of Creative Research Thoughts, Volume 1, Issue.9, September 2013

प्रस्तावना :–

स्वामी जी के अमेरिका जाने से पूर्व वहॉ का जनमानस इन मिशनरी हथकंडों से प्रभावित था। वह यह सोच भी नहीं सकता था कि भारत में कोई अच्छाई है और तभी स्वामी जी ने ऐसे जनमानस पर प्रहार किया।[1] एक भारत विदेशी विद्वान का कहना था कि हमने भारतीयों को जगत भ्रष्ट कर दिया है। उनके उत्तराधिकार को रद्द कर दिया है। हमने उनकी विवाह की संस्थाओं को बदल दिया है। उनके धर्म के पवित्रतम रीतिरिवाजों की हमने अवहेलना की है। उनके मंदिरों की जायजादों को जब्त कर लिया है और अपने सरकारी लेखें में उन्हें काफिर कहकर कलंकित किया है

स्वामी विवेकानन्द के राष्ट्रवादी विचारों का विश्लेषण करते समय यह ध्यातव्य है कि वे न तो पेशेवर समाजशास्त्री थे और न राजनैतिक विचारक। इसी कारण से उन्होंने न तो किसी ऐसे ग्रन्थ का प्रणयन ही किया है जिसमें उनके राष्ट्रवाद का सीधा निबन्धन हो और न राष्ट्रवाद संज्ञक शीर्षक से सीधे–सीधे किसी व्याख्यान माला का आयोजन ही किया है। इसलिये उनके चिंतन में बेवर और मैकाइवरपेज की भांति समाजशास्त्र और अरस्तू तथा हाब्स की भांति राजनीति शास्त्र के चरम प्रश्नों की मीमांसा नहीं मिलती। परतंत्र देश का परिब्राजक सन्यासी भारतीय समाज, धर्म और संस्कृति के स्वर्णिम पक्ष को विश्वमंच पर अनावृत करते हुये गुलाम भारतीयों में स्वाभिमान और राष्ट्रवाद का भाव भरने का अथक प्रयास करता है। इन्हीं तथ्यों के आलोक में उनके विचारों का अनुशीलन करना समीचीन होगा।

स्वामी विवेकानन्द स्वाधीनता के प्रबल पक्षपाती थे। बिना स्वाधीनता के भला व्यक्ति का विकास कैसे हो सकता है? स्वाधीनता तो विकास की पहली शर्त है। यदि कोई यह कहने का दुःसाहस करे कि मैं इस नारी का, इस बाला का उद्धार करूॅगा तो वह गलत है। हजार बार गलत है। दूर हट जाओ। ये अपनी समस्याओं को स्वयं हल कर लेंगे। तुम सर्वदाता का दम भरने वाले होते कौन हो? तुममें ऐसे दुःसाहस का विचार कैसे आया कि ईश्वर पर भी तुम्हारा अधिकार है? क्या तुम नहीं जानते कि प्रत्येक आत्मा ईश्वर का ही स्वरूप है? हर एक को भगवत्स्वरूप समझो। तुम केवल सेवा कर सकते हो। प्रभु की संतानों की सेवा करो– जब तुम्हें कभी अवसर मिले यदि प्रभु की इच्छा से तुम उनकी किसी संतान की सेवा कर सको तो सचमुच तू धन्य हो। तुम धन्य हो कि वह सौभाग्य तुम्हें प्राप्त हुआ और दूसरे उससे वंचित रहे। उस कार्य को पूजा की भावना से करो।[2]

स्वामी जी स्वतंत्रता के पक्के पक्षधर थे। उनका मन्तव्य था– विचार व कार्य की स्वतंत्रता ही जीवन उन्नति व हित साधन का एक मार्ग है। जहॉ पर यह स्वतंत्रता नहीं है वहॉ मनुष्य जाति तथा राष्ट्र की अवनति अवश्यंभावी है। यदि कोई पंथ, जाति, समाज, राष्ट्र या संस्था व्यक्ति के विकास में रोड़े अटकाये तो वह आसुरी है और उस का अन्त होना चाहिये।[3]

स्वामीजी का अतिशय राष्ट्र प्रेम उनके उत्कृष्ट राष्ट्रवाद का ही परिचायक है। वेदान्त का व्यावहारिक प्रयोग उनके दर्शन की अन्यतम विशेषता है। वेदान्त में वे वैयक्तिक,सामाजिक, राष्ट्रीय किं बहुना अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं का भी समाधान देखते थे। वास्तव में मनुष्य मनुष्य में भेद ही सभी समस्याओं की मूल है। इसी कारण से गुलाम और मालिक, सम्पन्न और विपन्न, सर्वहारा और पूंजीपति के मध्य की दूरी बढ़ती जा रही है। तात्विक रूप से सभी मनुष्य ब्रह्म स्वरूप हैं। सभी में एक ही आत्मा का वास है। तत्वमसि श्वेतकेतो। तू ही ब्रहम है। ऐसी स्थिति में क्या छोटा क्या बड़ा। दरिद्र, अपंग, नाई, लुहार, चमार, धोबी सभी तो भारतीय हैं। इसीलिए सभी के साथ प्रेम करो। भारतीयों को सम्बोधित करते हुये वे कहते हैं कि स्मरण रहे कि हमारा राष्ट्र झोपड़ियों में बसता है। वर्तमान समय में तुम्हारा कर्तव्य है कि तुम देश के एक भाग से दूसरे भाग में जाओ। गॉव–गॉव जाकर दूसरों को समझाओ कि अब आलस्य के साथ केवल बैठे रहने से काम नहीं चलेगा। उन्हें उनकी यथार्थ अवस्था का परिचय कराओ। और कहो–भइयों! सब कोई उठो। जागो। अब और कितना सोओगे। जाओ और उन्हें अपनी अवस्था सुधारने की सलाह दो और शास्त्रों की बातों को सरलतापूर्वक समझाते हुये उदात्त सत्वों का ज्ञान कराओ। उनके मन में यह बात जमा दो कि ब्राम्हणों के समान उनका भी धर्म पर समान अधिकार है। सभी को चण्डाल तक को भी । इन्हीं जाज्ज्वल्यमान मंत्रों का उपदेश दो। स्वामी जी कहते है कि सदियों से उॅची जातियों वाले राजाओं और विदेशियों के असहय अत्याचारों ने उनकी सारी शक्तियों को नष्ट कर दिया है। और अब शक्ति प्राप्त करने का पहला उपाय है– उपनिषदों का आश्रय लेना और वह विश्वास करना कि मैं आत्मा हूॅ। वेदान्त के इन सब महान तत्वों को अब जंगल और गुफाओं से वाहर लाना होगा और न्यायालयों, प्रार्थना स्थलों, मंदिरों एवं गरीबों के झोपड़ों में प्रवेश कर अपना कार्य करना होगा। अब तो मछली पकड़ते हुये मछुये और विद्याभ्यास करते हुये विद्यार्थियों के साथ इन तत्वों का कार्य करना होगा। ये संदेश प्रत्येक स्त्री–पुरूष और बालक के लिये है। वह चाहे जो पेशा करता हो, चाहे जहॉ रहता हो। अच्छा ये सब मछुये आदि उपनिषदों के सिद्धान्तों के अनुसार कार्य कैसे कर सकते हैं? मार्ग भी बता दिया क्या है। यदि मछुआ सोचे कि मैं आत्मा हूॅ तो वह उत्तम मछुआ होगा। यदि विद्यार्थी यह चिंतन करने लगे कि मैं आत्मा हूॅ तो एक श्रेष्ठ विद्यार्थी होगा।[4] स्वामी विवेकानन्द ने कहा था–मैं दार्शनिक नहीं हूॅ । तत्ववेत्ता भी नहीं हूॅ। कोई सन्त भी नहीं हूॅ और दरिद्रों को प्यार करता हूॅ। दरिद्रता और अज्ञान के गर्त में सदा डूबे हुये इन बीस करोड़ नर–नारियों के दुखें को कौन अनुभव करता है। मैं उसी को महात्मा कहूॅगा जो इनके दुखें का अनुभव करता है। किसके हृदय में उनके दुखों के लिये टीस होती है? उन्हें न कहीं प्रकाश मिला है न शिक्षा। उन्हें प्रकाश कौन देगा? कौन उनको शिक्षा देने के लिये उनके द्वार–द्वार भटकेगा। इन्हीं लोगों को तुम अपना ईश्वर समझो। निरन्तर इनका ध्यान करो। उनके लिये काम करो। उनके लिये निरन्तर प्रार्थना करो। ईश्वर तुम्हें मार्ग दिखलायेगा।

पर भला बिना आत्म सम्मान के स्वतंत्रता कैसे आ सकती है? राष्ट्रीय आत्म सम्मान की उर्बरभूमि में ही जन्मभूमि की स्वतंत्रता के पादप का प्रादुर्भाव और पल्लवन होता है। अंग्रेजों ने भारतीयों को गुलाम बनाने के लिये उनके धर्म और संस्कृति पर मर्मान्तक प्रहार किये और उसे गर्हित बतलाया। जिस जाति का राष्ट्रीय सम्मान समाप्त हो गया हो उसकी स्वतंत्रता हेतु प्रयास अरण्यरोदन सदृश है। तभी तो भारतवासियों को उनके अतीत गौरव की याद दिलाते हुये स्वामी जी कहते हैं – कैसा है यह देश। यहॉ की वायु भी आध्यात्मिक स्पन्दनों से पूर्ण है। यह धरती दर्शनशास्त्र, नीति शास्त्र और आध्यात्मिक के लिये उन सबके लिये जो पशु को बनाये रखने के हेतु चलने वाले अविरत संघर्ष से मनुष्य को विश्राम देता है। उस समस्त शिक्षा दीक्षा के लिये जिससे मनुष्य पशुता का जामा उतार फेंकता और जन्म मरणहीन सदानंद अमर आत्मा के रूप में आविर्भूत होता है– पवित्र है। यह वह धरती है जिसमें सुख का प्याला परिपूर्ण हो गया था और दुख का प्याला और अधिक भर गया था। अंततः यहीं सर्वप्रथम मनुष्य को यह ज्ञात हुआ कि यह तो सब निस्सार है। यहीं सर्वप्रथम यौवन के मध्यान्ह में, वैभव विलास की गोद में, ऐश्वर्य के शिखर पर और शक्ति के प्राचुर्य में मनुष्य ने माया की श्रंखलाओं को तोड़ दिया। यहीं इस देश में जीवन और मृत्यु की, जीवन के तृष्णा की और जीवन के संरक्षण के निर्मित किये गये मिथ्या और विक्षिप्त संघर्षों की महान समस्याओं से सर्वप्रथम जूझा गया और उनका समाधान किया गया– ऐसा समाधान जो न भूतो न भविष्यति –क्योंकि यहीं और केवल यहीं पर इस तथ्य की उपलब्धि हुई कि जीवन भी स्वतः एक अशुभ है। किसी एक मात्र सत्तत्व की छाया मात्र। यही वह देश है जहॉ और केवल जहॉ धर्म व्यावहारिक और यथार्थ था और यहीं पर नर–नारी लक्ष्य सिद्धि के लिये परम पुरूषार्थ के लिये साहस पूर्वक कर्म क्षेत्र में कूदे। जैसे अन्य देशों में लोग अपने से दुर्बल अपने ही बन्धुओं को लूटकर जीवन के भोगों को प्राप्त करने के लिये विक्षिप्त होकर झपटते हैं। यहीं और केवल यहीं पर मानव हृदय इतना विस्तीर्ण हुआ कि उसने केवल मनुष्य जाति को ही नहीं, वरन् पशु पक्षी तथा वनस्पति तक को भी अपने में समेट लिया– सर्वोच्च देवताओं से लेकर बालू के कण तक। एको देवः सर्वभूतेषु गूढ़ः ....महानतम और लघुतम सभी को मनुष्य के विशाल अनंत बर्द्धित हृदय में स्थान मिला और केवल यहीं पर मानवात्मा ने इस विश्व का अध्ययन एक अविच्छिन्न एकता के रूप में किया जिसका हर स्पंदन उसका अपना स्पंदन है।

परतंत्र भारतीयों के प्रसुप्त आत्मविश्वास को पुनर्जागरित करते हुये स्वामी जी कहते हैं 'इस एक बात को अच्छी तरह समझ लो कि जो मनुष्य दिन रात यह सोचता रहता है कि मैं कुछ भी नहीं हूॅ तो हमें उससे कोई आशा नहीं रखनी चाहिये। यदि कोई रात–दिन यह सोचता है कि मुझमें शक्ति है तो वास्तव में उसमें शक्ति आ जायेगी। यह एक महान सत्य है जिसे तुम्हें याद रखना चाहिये। हम उस सर्वशक्तिमान प्रभु की सन्तान है, उस उन्नत ब्रह्म की चिनगारियॉ है। हम तुच्छ कैसे हो सकते हैं। हम सब कुछ हैं हम अहं ब्रहमास्मि। सब कुछ करने को प्रस्तुत है और सब कुछ कर सकते हैं। हमारे पूर्वजों में ऐसा ही दृढ आत्म विश्वास था। इसी आत्मविश्वास की प्रेरणा शक्ति ने उन्हें सभ्यता की ऊॅची से

ऊँची सीढ़ी पर वैठाया था और अब यदि अवनति हुई है, यदि कोई दोष आ गया है तो तुम देखोगे कि इस अवनति का आरंभ उसी दिन से हो गया जब से हम अपने इस आत्मविश्वास को खो बैठे।[5] राष्ट्र के नौजवानों को स्वातन्त्र्य या में आत्माहुति हेतु प्रेरित करते हुये स्वामी जी कहते हैं– कलकत्ता निवासी युवकों। उठो, जागो, शुभ मुहूर्त आ गया है। हिम्मत करो और डरो मत। उठो जागो। संसार तुम्हें पुकार रहा है। भारत के अन्य भागों में बुद्धि है। धन भी है। परन्तु उत्साह की आग केवल हमारी ही जन्मभूमि मे है। उसे बाहर आना ही होगा। इसलिये कलकत्ते के युवकों। अपने रक्त में उत्साह भरकर जागो। मत सोचो कि तुम गरीब हो। मत सोचो कि तुम्हारे मित्र नहीं है। अरे! क्या कभी तुमने देखा है कि रूपया मनुष्य का निर्माण करता है। नहीं! मनुष्य ही सदा रूपये का निर्माण करता है। यह सम्पूर्ण संसार मनुष्य की शक्ति से, उत्साह की शक्ति से विश्वास की शक्तियों से निर्मित हुआ है।[6] कलकत्ता अभिनन्दन के अवसर पर स्वामी जी के निम्न उद्‌गार उनकी राष्ट्रीयता के सबल प्रमाण है। ''मैं आप लोगों से इतना ही कह सकता हूँ कि मेरी इच्छा, मेरी प्रबल और आंतरिक इच्छा यह है कि मैं संसार की और सर्वोपरि अपने देश और देशवासियों की थोड़ी सी भी सेवा कर सकूँ।''[7]

स्वामी विवेकानन्द प्रखर राष्ट्रवादी थे। फिर भी उनका दर्शन अन्तर्राष्ट्रीयतावाद से ओत–प्रोत प्रतीत होता है। उनका राष्ट्रवाद संकीर्ण नहीं था बल्कि उनका राष्ट्रवाद ऐसा राष्ट्रवाद था जो दूसरे राष्ट्रों के लिये भी प्रेरणा प्रदान करे। उन्हें अपने देश से प्यार था और वे अपने देश को ऊँचा उठाने को उत्सुक थे क्योंकि हमारे देश का चरित्र प्राचीन काल से बहुत ऊँचा रहा है। लेकिन बीच में विदेशियों के शासन के फलस्वरूप हम अपने गौरव और साधना को भूल चुके थे। इसीलिये स्वामी विवेकानन्द का उद्‌देश्य देश को अन्धकार से जगाकर प्रकाश में लाना था।

नव्य वेदान्त के अनुसार सम्पूर्ण मानवता में एक तत्व विद्यमान है परन्तु उसका विकास क्रमशः होता है। अन्तर्राष्ट्रीय भावों का विकास सुदृढ राष्ट्रीय गौरव के धरातल पर ही हो सकता है। स्वामीजी के अनुसार शिक्षा का उद्‌देश्य राष्ट्रीय गौरव का विकास करना है। वे लिखते हैं – हे वीर! साहस का कार्य करो, गर्व से कहो कि मैं भारतवासी हूँ और प्रत्येक भारतवासी मेरा भाई है। तुम चिल्लाकर कहो मूर्ख भारतवासी, ब्राम्हण भारतवासी, चण्डाल भारतवासी सभी मेरे भाई हैं। भारत के दीन –दुखियें के साथ एक होकर गर्व से पुकारकर कहो– प्रत्येक भारतवासी मेरा भाई है। भारतवीसी मेरे प्राण हैं। भारत के देवी–देवता मेरे ईश्वर हैं। भारत का समाज मेरे बचपन का झूला, जवानी की फुलवारी और बुढ़ापे की काशी है। भाई कहो कि भारत की मिट्‌टी मेरा स्वर्ग है। भारत के कल्याण में मेरा कल्याण है। और रात दिन तुम्हारी यही रट लगी रहे। हे गौरीनाथ! हे जगदम्बे! मुझे मनुष्यत्व दो। मॉ मेरी दुर्बलता तथा कापुरूषता दूर कर दो। मॉ मुझे मनुष्य बना दो।

कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया ने लिखा है ''स्वामी विवेकानन्द ने धर्म की प्रकृति से युक्त राष्ट्रवाद का उपदेश दिया।'' सिंगापुर के सास्कृतिक मंत्री एस.राजरत्नम् ने अपने एक भाषण में कहा था

कि यद्यपि स्वामी विवेकानन्द ने अपने को राजनीति में कभी नहीं उलझाया लेकिन वे राष्ट्रवादी आन्दोलन एवं राष्ट्रवादियों के लिये उठने वाले राष्ट्र चेतना की लहर के प्रतीक बन गये। मद्रास विश्वविद्यालय के दर्शन विभाग के अध्यक्ष डॉ.टी.एस.पी. महादेवन विवेकानन्द को आधुनिक भारत के प्रथम राष्ट्रवादी नेताओं में प्रमुख मानते हैं– ''तथा उन्हें भारत की अपूर्व–राष्ट्रवादी भावना का श्रेय प्रदान करते हैं। वे लिखते हैं – वह देशभक्त संन्यासी स्वामी विवेकानन्द का वेदान्ती राष्ट्रवाद ही था जिसने महात्मा गांधी की नीति युक्त राजनीति को दिशा दी जिससे भारत स्वाधीन हुआ था। कोलम्बिया विश्वविद्यालय के अध्यक्ष डॉ. गेसर नकर कहते हैं– विवेकानन्द ब्रिटिश शासन से मुक्ति की आवश्यकता का अनुभव करते थे क्योंकि उसे वे दमनकारी एवं राष्ट्रीय चेतना की उपलब्धि में बाधक मानते थे। उनके इस राजनैतिक दृष्टिकोण और तीब्र राष्ट्रभावना के साथ उनका अपने देशवासियों के प्रति तिरस्कार का भी भाव था जो अपने राजनैतिक शासकों का अन्धानुकरण करते हुये अपनी सांस्कृतिक जड़ों को खो बैठे थे।

स्वामी जी का राष्ट्रवाद केवल राष्ट्र का प्रशस्तिगान ही नहीं है। वे एक तरफ जहॉ भारत की आध्यात्मिक आभा से अभिभूत हैं वहीं अपनी संस्कृति का आत्मालोचन भी करते हैं। अंधविश्वास तो उन्हें छू भी नहीं गया था। उनका कहना है कि भारत के पतन और दारिद्र्य दुख का प्रधान कारण यह है कि घोंघे की तरह अपना सर्वस्व सिमेटकर उसने अपना कार्यक्षेत्र संकुचित कर लिया था तथा आर्येत्तर दूसरी मानव जातियों के लिये, जिन्हें सत्य की तृष्णा थी अपने जीवनप्रद सत्य रत्नों का भंडार नहीं खोला था। हमारे पतन का एक और प्रधान कारण यह भी है कि हम लोगों ने बाहर जाकर दूसरे राष्ट्रों से अपनी तुलना नहीं की और तुम लोग जानते हो कि जिस दिन से राजाराम मोहनराय ने संकीर्णता की वह दीवार तोड़ी उसी दिन से भारत में थोड़ा सा जीवन दिखाई देने लगा जिसे आज तुम देख रहे हो। उसी दिन से भारत के इतिहास ने एक दूसरा मोड़ लिया और इस समय वह क्रमशः उन्नति के पथ पर अग्रसर हो रहा है। अतीत काल में यदि छोटी नदियॉ ही यहॉ वालों ने देखी हो तो समझना कि अब बहुत बडी बाढ़ आ रही है और कोई भी उसकी गति को रोक न सकेगा। अतः तुम्हें विदेश जाना होगा। आदान–प्रदान ही अभ्युदय का रहस्य है। क्या हम दूसरों से सदा लेते ही रहेंगे? क्या हम लोग सदा ही पश्चिम वासियों के पद प्रान्त में बैठकर ही सब बातें यहॉ तक कि धर्म भी सीखेंगे? हॉ, हम उन लोगों से कल–कारखानों के काम सीख सकते हैं और भी दूसरी बहुत सी बातें सीख सकते हैं परन्तु हमें भी उन्हें कुछ सिखाना होगा और वह है हमारा धर्म। हमारी आध्यात्मिकता। संसार सर्वांगीण सभ्यता की अपेक्षा कर रहा है।

स्वामी जी के वक्तव्य 'भारत की उच्च जाति के प्रति प्रेम' शीर्षक में उनके हृदय उदधि में तरंगित राष्ट्रीयता का उत्प्रवाह अवलोकनीय है – तुम लोग शून्य में विलीन हो जाओ और फिर एक नवीन भारत निकल पड़े। निकले हल पकड़कर, किसानों की कुटी भेद कर, जाली, माली, मोची, मेहतरों की झोपडियों से। निकल पड़े बनियों की दुकानों से, भुजवा के भाड़ के पास से, कारखानों से, हाट से,

बाजार से। निकले झोपड़ियों, जंगलों, पहाड़ों पर्वतों से। इन लोगों ने सहस्र–सहस्र वर्षों तक असह्य अत्याचार सहन किया है। उससे पायी है अपूर्व सहिष्णुता। सनातन दुख उठाया जिससे पायी है अटल जीवनी शक्ति। ये लोग मुट्ठीभर सत्तू खाकर दुनिया उलट दे सकेंगे। आधी रोटी मिली तो तीन लोक में इतना तेज न अॅटेगा। ये रक्तबीज के प्राणों से युक्त हैं और पाया है सदाचार बल, जो तीन लोक में नहीं है। इतनी शान्ति, इतनी प्रीति, इतना प्यार, वेजवान रहकर रात दिन इतना खटना और काम के वक्त सिंह का विक्रम। यही है तुम्हारे सामने तुम्हारा उत्तराधिकारी भावी भारत। वे तुम्हारी रत्न पेटिकायें, तुम्हारी मणि की अगूँठियॉ – फेंक दो इन के बीच जितना शीघ्र फेंक सको। फेंक दो और तुम हवा में विलीन हो जाओ, अदृश्य हो जाओ, सिर्फ कान खड़े रखो। तुम त्योंही विलीन होगे उसी वक्त सुनोगे कोटि जीमूतस्यान्दिनी त्रैलोक्यकंपनकारिणी भावी भारत की उद्‌बोधन ध्वनि 'वाह गुरू की फतह' ।[8]

जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' को अपने जीवन का महामन्त्र मानने वाले स्वामी जी की राष्ट्रीय भावना का परिचय उन्हीं के शब्दों 'पश्चिमी देशों से लौटने के कुछ ही समय पहले एक अंग्रेज मित्र ने मुझसे पूछा था स्वामी जी! चार वर्षों तक विलास की लीला भूमि गौरवशाली महाशक्तिमान पश्चिमी भूमि पर भ्रमण कर चुकने के बाद आपकी मातृभूमि अब आपको कैसे लगेगी? मैं बस यही कह सका। पश्चिम से आने से पहले भारत को मैं प्यार ही करता था अब तो भारत की धूलि भी मेरे लिये पवित्र है। भारत की हवा अब मेरे लिये पावन है। भारत अब मेरे लिये तीर्थ है।

संदर्भ सूची

1. मेरी लुईवर्क–स्वामी विवेकानन्द इन अमेरिका, न्यू डिसकवरीज कलकत्ता, 1966, पू. 143
2. अविनाश लिंगम् टी.एस.–स्वामी विवेकानन्द शिक्षा, पृ. 13
3. स्वामी विवेकानन्द शिक्षा, संस्कृति और समाज, पृ. 91–92
4. स्वामी विवेकानन्द शिक्षा (अनुवादक) द्वारकानाथ तिवारी, पृ. 48–49
5. वहीं पृ. 18
6. विवेकानन्द साहित्य संचयन (सस्ता द्वितीय संस्करण)–नागपुर,पृ. 197
7. वहीं पृ. 198
8. वही पृ. 457–458